जनजातीय समाज के उत्थान में सहायक साबित हुआ शिबू सोरेन का रात्रिपाठशाला

सरिता कुमारी*

भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा व्यवस्था को व्यक्ति के पूर्ण विकास का माध्यम माना गया है। बावजूद कई खामियों की वजह से शिक्षा जनमाध्यम तक की पहुंच नहीं बन सकी। शुरुआत काल से अंग्रेज के भारत आगमन तक शिक्षा का स्वरूप धार्मिक हुआ करता था। उन दिनों संचालित विद्यालयों का उद्देश्य पंडित और मौलवी पैदा करना था। इस होड़ में आदिवासियों तक शिक्षा की पहुंच नहीं हो सकी। 17वीं शताब्दी तक कई यूरोपीय कंपनियां भारत आ चुकी थीं। इन यूरोपीय कंपनियों में हुए संघर्ष के बाद अंग्रेजों को जीत हासिल हुई। इसके पश्चात धीरे–धीरे भारत पर अंग्रेजी शासन ने अधिपत्य जमाना शुरू किया और ईसाई मिशनरी शिक्षा की शुरुआत हुई। हालांकि, इसके बाद भी जनजातियों की बीच शिक्षा का स्तर नगण्य थी। इसके लिए कई परिस्थितियां जिम्मेदार थी और कुछ अंग्रेज सरकार की नीतियां भी इसमें उत्तरदायी थी। यह एक तरह की अंग्रेजों की चाल भी थी ताकि शिक्षा पर एक विशेष वर्ग का अधिकार रह जाए। भारत के प्रथम पादरी पुर्तगाली संत जेवियर थे। जिन्होंने भारत में शिक्षा के बढ़ावा के लिए कई प्रयास किए। बाद में 1835 में लार्ड मैकाले ने अधोगामी निस्यंदन सिद्धांत का शिक्षा में प्रतिपादन किया। इसके तहत पहले उच्च वर्ग के विशेष व्यक्तियों को शिक्षा दी जाती थी। इसके साथ निम्न वर्ग को उच्च वर्ग का अनुसरण या नकल करते ही स्वयं शिक्षित हो जाने की योजना बनाई गई थी। अंग्रेजों का विचार था कि इस कूटनीति से वह भारत में अधिक समय तक अपना परचम पहरा सके।

आगे चलकर महात्मा गांधी ने बुनियादी शिक्षा और व्यावसायिक शिक्षा पर जोर दिया। गांधी का विचार था कि किसी भी वर्ग के लोगों को आर्थिक समस्या की वजह से शिक्षा बाधित नहीं और अशिक्षित न रह जाएं। गांधी के इन्ही विचारों से प्रभावित होकर तब के हजारीबाग जिले के गोला स्थित नेमरा निवासी सोबरन सोरेन के पुत्र शिबू सोरेन ने (1960–1980) आंदोलन चलाया था। 40–50 के दशक में उनके पिता पढ़े लिखे लोगों में एक थे। शिक्षित होने की वजह से समाज में उनकी अलग इज्जत थी। उनके इस आंदोलन का मुख्य मकसद आदिवासियों, पिछड़ों और दलितों के बीच शिक्षा की ज्योत जलाना था। शिबू जब धनबाद और गिरिडीह में इलाके में आंदोलन चला रहे थे उस वक्त आदिवासी का यह इलाका अत्यंत पिछड़ा हुआ करता था। यहां गरीबी व्याप्त थी शिक्षा का हाल खस्ता था। जिस कारण भोले–भाले आदिवासी महाजनों के चंगुल में बड़ी आसानी से फंस जाते थे।

उनके इस आंदोलन के साथी रहे जामताड़ा पिपरासोल निवासी झगडू पंडित कहते हैं कि उनकी पहली मुलाकात शिबू सोरेन से बोकारो जिला के बहादुर में हो रही सभा में हुई थी। इस सभा को संबोधित करते हुए शिबू सोरेन ने कहा था कि शिक्षा से ही संपन्नता लाई जा सकती है। धन की कमी के कारण अगर लोग पढ़ाई–लिखाई नहीं कर पा रहे हैं या स्लेट पेसिंल की खरीददारी नहीं कर पा रहे तो जमीन को गोबर से लीप लो तथा ईंट भट्ठे में जले कोयले और लकड़ी की सफेद छाई से अक्षर ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करें। इसके बाद झगरू पंडित ने शिबू सोरेन को संताल आने का न्योता दिया था।[1] इसके बाद शिबू सोरेन शिक्षा आदिवासी बहुल इलाका धनबाद जिले टुंडी स्थित पोखरिया में उन्होंने आश्रम का संचालन किया। जहां गरीब, वंचित और पिछड़ों को साक्षर बनाने के लिए रात्रि पाठशाला का संचालन किया। इस विद्यालय में दिन के वक्त 6–14 वर्ष के बच्चों को बुनियादी शिक्षा दी जाती थी जबकि 15 से अधिक उम्र के लोगों को बुनियादी और व्यावसायिक दोनों तरह की शिक्षा दी जाती थी। इस आश्रम में बच्चे दिन में पढ़ाई करते थे जबकि वृद्ध और जवान रात को पढ़ाई करते थे। इसके पीछे तर्क था कि गरीब आदमी दिन भर अपनी रोजीरोजगार कर सकता हैं लेकिन शाम को घर लौटने के बाद अपनी पढ़ाई कर सकते हैं।

दरअसल, शिबू सोरेन को इस बात का मलाल था कि विषम परिस्थितियों की वजह से वह चाहकर भी अपनी पढ़ाई पूरी नहीं कर पाए थे लेकिन वे शिक्षा की अहमियत से भली भांति परिचित थे। वे अपने शिक्षक पिता से काफी प्रभावित थे। उनका मानना था कि समाज के पिछड़ेपन की मुख्य वजह अशिक्षा है। अशिक्षा की वजह से ही लोग शराब का सेवन करते हैं। इसके बाद नशे की लत की वजह से वे महाजन और सूदखोरों के चक्रव्यूह में फंस जाते थे। महाजनों के लिए हड़िया दारू एक ऐसा जरिया था जिसके जरिये वे आदिवासियों का सबकुछ छीन लेते थे। महाजनों के मकड़जाल में फंसे लोगों को बाहर निकालने के लिए उन्होने सबसे पहले शिक्षा पर जोर दिया।

यहां के लोग अत्यंत ही गरीब थे, जिस कारण उनकी आर्थिक स्थिति अत्यंत ही खराब थी। ऐसे में घर गृहस्थी को चालने के लिए महिलाएं एवं पुरुष दिनभर महाजनों के खेतों में काम करते थे। जिससे उन्हें दो वक्त की रोटी मिलती

***शोधार्थी, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग**

थी। बच्चे भी अपने माता पिता के इस काम में हाथ बंटाते थे। इस लिए शिबू सोरेन ने रात्रि पाठशाला चलाने का मन मनाया। जिसका मकसद था कि बच्चे के साथ–साथ बड़े भी शिक्षा ग्रहण कर सके। शुरू–शुरू में रात्रि पाठशाला के संचालन में उन्हें दिक्कतों का सामना करना पड़ा क्योकिं उस वक्त इलाके में बिजली नहीं थी। पेंसिल स्लेट की भी व्यवस्था करनी थी। शुरुआत में शिबू ने अपने स्तर से लालटेन एवं पेसिंल स्लेट की व्यवस्था की थी बाद के दिनों में सरकारी सहायता के साथ–साथ स्वयंसेवी संस्थाओं ने गुरुजी का सहयोग किया।

वर्ष 1978 में झारखंड क्षेत्रीय बुद्धिजीवी सम्मेलन में शिबू सोरेन के दिए भाषण में शिक्षा प्रति उनके लगाव स्पष्ट उल्लेख मिलता है। इस दौरान शिबू सोरेन ने कहा था–समग्र विकास का काम नवयुवक और युवतियों को संगठन बनाकर करना होगा। जनता के बीच रचनात्मक कार्य करके हम हम विकास खुद ही अपनी समस्याएं सुलझा लेंगे। इसके लिए हमें सामूहिक प्रत्यन करने होंगे। शासन करने वालों ने हम मेहनत करने वालों को शिक्षा से वंचित रखा, क्योंकि वे जानते थे अगर हम शिक्षित हो जाएंगे अपनी गुलामी के बंधनों को हम तोड़कर उठ खड़े होंगे। हमारे युवा भाई–बहन जो पढ़ाई से भागते हैं उन्हें इसका आदर समझना होगा। बचपन से पढ़ाई की आदत डालनी होगी। रात्रिपाठशाला इसके लिए उपयोगी हैं। जहां दिनभर आप कहीं रहकर कुछ कर सकते हैं लेकिन रात को लालटेन के पास बैठकर आप पढ़ाई लिखाई सामूहिक रूप से कर सकते हैं। जब व्यक्ति पढ़ा लिखा है वे लड़के लड़कियां एक दल (समूह) की पढ़ाई का इंतजाम करें। स्कूल कॉलेज सब के लिए एक समान होनी चाहिए। सरकार पर भरोसा करने से कुछ नहीं चलेगा। शिक्षा के विकास के लिए हमें खुद कोशिश करनी होगी। शिक्षा को एक एक आंदोलन के रूप में लेना होगा।[2]

रात्रि पाठशाला चलाने में शिबू सोरेन को सबसे ज्यादा सहयोग सेवानिवृत्त शिक्षक राजेंद्र तिवारी ने की थी। धनबाद जिले के टुंडी के पूर्णाडीह रहने वाले तिवारी शिबू के समांतरण सरकार में बतौर शिक्षा मंत्री हुआ करते थे। शिबू सोरेने राजेंद्र तिवारी को ही आदिवासियों को शिक्षित करने का जिम्मा दे रखा था। प्रारंभिक दिनों में तिवारी जी आदिवासियों के घर–घर पहुंच बच्चे और बड़ों को आश्रम तक लाते थे। जहां रात को पढ़ाई करवाते थे। बाद में इसका इतना असर हुआ लोग खुद ही आश्रम आकर पढ़ाई करने लगे। धीरे–धीरे टुंडी के कई गांवों में रात्रिपाठशाला का संचालन होने लगा। शिबू सोरेन खुद इन लोगों को पढ़ाई कराते थे। साथ ही उन्होंने शिक्षित लोगों से आग्रह शुरू किया के वो कम से कम पांच लोगों को शिक्षित बनाएं। यह अभियान तेजी से आगे बढ़ने लगा। जिसके बाद लोग शिबू सोरेन को गुरुजी कहने लगे। आज भी शिबू सोरेन को लोग प्यार से गुरुजी और दिशोम गुरु (विश्व गुरु) जैसे नाम से लोग पुकारते हैं।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शिबू सोरेन द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में किए गए इन प्रयासों से आदिवासी समाज को उत्थान हुआ। वे अपने अधिकारों को भली भांति समझने लगे लेकिन अगर हम वर्तमान समय की बात करें तो आ भी जनजातिय समाज के लोग शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़े हुए हैं। वर्ष 2011 के जनगणना के मुताबिक झारखंड राज्य में साक्षरता दर 66.44 फीसद है। इनमें अनुसूचित जनजातियों की साक्षरता दर 57.1 फीसद है, जो राज्य के साक्षरता दर से 9.31 फीसद से कम है।

साभार

- दैनिक जागरण 04 नवंबर 2020
- दैनिक जागरण 15 अप्रैल 2019
- प्रभात खबर 28 अक्टूबर 2015
- पाठशाला भीतर बाहर पत्रिका का अंक फरवरी 2020
- प्रभात खबर 07 नवंबर 2019
- दैनिका जागरण चार फरवरी 2020
- डॉ. ए. एस अल्तेकर–प्राचीन भारती शिक्षा पद्धति पृ. 117